International Journal of Multidisciplinary Allied Research Review and Practices
IJMARRP ISSN No: 2455-1570 (Volume II, Issue XII, December 2016)

भारतीय समाज तथा साहित्य में नारी की भूमिका

प्रियंका गुप्ता, डॉ. जे. सी.नारायणन
संस्कृत विभाग
SUNRISE UNIVERSITY-ALWAR

प्रस्तावना:

सदियों से ही भारतीय समाज में नारी की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका रही है । उसी के बलबूते पर भारतीय समाज खड़ा है । नारी ने भिन्न-भिन्न रूपों में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । चाहे वह सीता हो , झांसी की रानी, इन्दिरा गाँधी हो, सरोजनी नायडू हो ।

किन्तु फिर भी वह सदियों से ही क्रूर समाज के अत्याचारों एवं शोषण का शिकार होती आई हैं । उसके हितों की रक्षा करने के लिए एवं समानता तथा न्याय दिलाने के लिए संविधान में आरक्षण की व्यवस्था की गई है । महिला विकास के लिए आज विश्व भर में 'महिला दिवस' मनाये जा रहे हैं । संसद में 33 प्रतिशत आरक्षण की मांग की जा रही है ।

इतना सब होने पर भी वह प्रतिदिन अत्याचारों एवं शोषण का शिकार हो रही है । मानवीय क्रूरता एवं हिंसा से ग्रसित है । यद्यपि वह शिक्षित है , हर क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है तथापि आवश्यकता इस बात की है कि उसे वास्तव में सामाजिक , आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय प्रदान किया जाये । समाज का चहुँमुखी वास्तविक विकास तभी सम्भव होगा ।

श्री प्रह्लाद उवाच
न केवलं मे भवतश्च राजन्स वै बलं बलिनां चापरेषाम्।
परेऽवरेऽमी स्थिरजङ्गमा ये ब्रह्मादयो येन वशं प्रणीताः॥८॥
स ईश्वरः काल उरुक्रमोऽसावोजः सहः सत्त्वबलेन्द्रियात्मा।
स एव विश्वं परमः स्वशक्तिभिः सृजत्यवत्यत्ति गुणत्रयेशः॥९॥
जह्यासुरं भावमिमं त्वमात्मनः समं मनो धत्स्व न सन्ति विद्विषः।
ऋतेऽजितादात्मन उत्पथे स्थितात्तद्धि ह्यनन्तस्य महत्समर्हणम्॥१०॥
दस्यून्पुरा षण्न विजित्य लुम्पतो मन्यन्त एके स्वजिता दिशो दश।
जितात्मनो ज्ञस्य समस्य देहिनां साधोः स्वमोहप्रभवाः कुतः परे॥११॥
–श्रीमद्भागवते सप्तमस्कन्धेऽष्टमोऽध्यायः

परिचय:

नारी का सम्मान करना एवं उसके हितों की रक्षा करना हमारे देश की सदियों पुरानी संस्कृति है । यह एक विडम्बना ही है कि भारतीय समाज में नारी की स्थिति अत्यन्त विरोधाभासी रही है । एक तरफ तो उसे शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है तो दूसरी ओर उसे 'बेचारी अबला' भी कहा जाता है । इन दोनों ही अतिवादी धारणाओं ने नारी के स्वतन्त्र बिकास में बाधा पहुंचाई है ।

प्राचीनकाल से ही नारी को इन्सान के रूप में देखने के प्रयास सम्भवत : कम ही हुये हैं । पुरुष के बराबर स्थान एवं अधिकारों की मांग ने भी उसे अत्यधिक छला है । अत: वह आज तक 'मानवी' का स्थान प्राप्त करने से भी वंचित रही है ।

मध्यकाल में नारी की स्थिति:

इतिहास के प्रारम्भिक रूप को देखने से ज्ञात होता है कि शुरू से ही नारी परिवार का केन्द्र बिन्दु रही है। उन दिनों परिवार मातृसत्तात्मक था। खेती की शुरूआत तथा एक जगह बस्ती बनाकर रहने की शुरूआत नारी ने ही की थी, इसलिए सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भ में नारी है किन्तु कालान्तर में धीरे -धीरे सभी समाजों में सामाजिक व्यवस्था मातृ-सत्तात्मक से पितृसत्तात्मक होती गई और नारी समाज के हाशिए पर चली गई। आर्यों की सभ्यता और संस्कृति के प्रारम्भिक काल में महिलाओं की स्थिति बहुत सुदृढ़ थी। ऋग्वेद काल में स्त्रियां उस समय की सर्वोच्च शिक्षा अर्थात् बृह्मज्ञान प्राप्त कर सकतीं थीं। ऋग्वेद में सरस्वती को वाणी की देवी कहा गया है जो उस समय की नारी की शास्त्र एवं कला के क्षेत्र में निपुणता का परिचायक है। अर्द्धनारीश्वर की कल्पना स्त्री और पुरूष के समान अधिकारों तथा उनके संतुलित संबंधों का परिचायक है। वैदिक काल में परिवार के सभी कार्यों और भूमिकाओं में पत्नी को पति के समान अधिकार प्राप्त थे। नारियां शिक्षा ग्रहण करने के अला वा पति के साथ यज्ञ का सम्पादन भी करतीं थीं। वेदों में अनेक स्थलों पर रोमाला, घोषाल, सूर्या, अपाला, विलोमी, सावित्री, यमी, श्रद्धा, कामायनी, विश्वम्भरा, देवयानी आदि विदुषियों

के नाम प्राप्त होते हैं। उत्तरवैदिक काल में भी स्त्रियों की प्रतिष्ठा बनी रही। इस के अलावा शासन, सेना, राज्य-व्यवस्था में स्त्रियों के योगदान के प्रमाण मिलते हैं। प्राचीन भारत में महिलाओं की स्थिति से संबंधित दो विचार के सम्प्रदाय मिलते हैं। एक सम्प्रदाय के समर्थकों का कहना है कि महिलायें 'पुरूषों के बराबर' थीं, जबकि दूसरे सम्प्रदाय के समर्थकों की मान्यता है कि महिलाओं का न केवल अपमान ही होता था बल्कि उनके प्रति घृणा भी की जाती थी। वैदिक सूत्रों के आधार पर उक्त काल खण्डों में स्त्री की गौरवपूर्ण एवं सम्मानजनक स्थिति स्वीकार करते है तथा परवर्ती सूत्रों में उत्तरवैदिक काल से स्त्रियों की निम्नतर स्थिति के स्पष्ट संकेत मिलते हैं । नारी समाज का वह अंग है जो व्यक्ति और समाज के स्तर पर अनेक भूमिकाओं को एक साथ ही निर्वाहित करती है। एक ही समय में वह एक से अधिक रूपों में जीवित रहती है और इन विभिन्न रूपों में वह एक साथ ही माता , बहन, पुत्री, प्रेयसी, दोस्त तथा वेश्या तक हो जाती है। वह किसी न किसी रूप में कहानी में अवश्य ही चित्रित होती है। ''वास्तव में गृहस्थाश्रम की सफलता नारी पर आधरित है। इसीलिए तो प्राचीनकाल में नारी प्रतिष्ठित पद पर विराजमान थी। मनु ने भी अपने सामाजिक ग्रन्थ 'मनु स्मृति' में लिखा है-

'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवताः ।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते सर्वास्तत्रफलाः क्रियाः ।

अर्थात् जिस कुल में स्त्रियों की पूजा होती है, उस कुल पर देवता प्रसन्न होते हैं और जिस कुल में स्त्रियों की पूजा, वस्त्र, भूषण तथा मधुर वचनादि द्वारा सत्कार नहीं होता है , उस कुल में सब कर्म निष्फल होते हैं। उपनिषदों में भी कहा गया है ,-''सृष्टि की सम्पूर्ण रिक्तता की पूर्ति स्त्री से मानी गयी है। मानव जीवन के सर्वतोन्मुखी विकास में नारी की अहम भूमिका रही है। जिसने बृहदरूपेण समाज का चतुर्दिक विकास किया है। नारी की स्थिति उसकी आर्थिक प्रगति राजनितिक सक्रियता तथा उसके वैचारिक आदर्शों से निरंतर प्रभावित होती रही है। महाभारत काल में नारी के अधिकार पहले जैसे नही रहे। वर्ण व्यवस्था में भी कठोरता आई तथा नारी घर -ग्रहस्थी तक सीमित रहने लगी। बहुपत्नी व्यवस्था और अनुलोम विवाह के कारण नारी उपभोग की वस्तु बनने लगी। तप, त्याग, नम्रता, धैर्य आदि पतिव्रत धर्म का पालन करना उनके प्रमुख लक्ष्य माने गये। पति के मनमाने अधिकार का ज्वलंत उदाहरण द्रोपदी और सीता बनी। किशोरियों को शिक्षा से वंचित रखा जाने लगा। बहु -विवाह एवं बाल विवाह होने लगे , विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। विधवा-विवाह पर प्रतिबंध लग गया। पतिव्रत धर्म सर्वोच्च बन जाने के का रण विधवा का जीवन नरक हो गया, परिणामस्वरूप सती प्रथा का जन्म हुआ।

मध्ययुग में डावांडोल राजनैतिक स्थिति का प्रभाव देश की सामाजिक , आर्थिक स्थितियों पर पड़ा। लगातार विदेशी आक्रमणों एवं भिन्न सांस्कृतिक परिवेश के साथ भारत में इस्लाम के आक्रमण ने पहले संघर्ष फिर सांस्कृतिक परिवर्तन के लिए जमीन तैयार की। स्त्रियों की स्थिति में भी परिवर्तन आया। मुसलमानों के वर्चस्व का जितना असर पुरुषों की स्थिति पर दिखायी देता है , स्त्रियों की अधीनस्थ की भूमिका ने उसे क्रमशः अवनति की ओर अग्रसर किया। भारत के मध्यकाल में स्त्रियों के अगाध पण्डिता होने के दृष्टांत भी

पाये जाते हैं। स्त्री का यह युग भारत के इतिहास का ''स्वर्णिम युग'' कहा जा सकता है। इस युग के आते ही स्त्री के दिव्य गुण धीरे-धीरे उसके अवगुण बनने लगे, साम्राज्ञी से वह धीरे-धीरे आश्रिता बन गयी। जो स्त्रियां वैदिक युग में धर्म और समाज का प्राण थीं, उन्हें श्रुति का पाठ करने के अयोग्य घोषित किया गया। वैदिक युग का दृष्टिकोंण स्त्री के प्रति दिव्य कल्पनाओं तथा पुनीत भावनाओं से परिवेष्टित था , जो धीरे-धीरे पूर्णतयाः बदल चुका था। यह युग तो जैसे स्त्रियों की गिरावट का युग था। ''उनके मानसिक तथा आत्मिक विकास के द्वारों पर ताले लगा दिए गये। उनकी साहित्यिक उन्नति के मार्ग पर अनेकों प्रतिबंध लगा दिए गये। 'स्त्री शूद्रो नाधीताम्' जैसे वाक्य रचकर उसे शूद्र की कोटि में रख दिया। स्त्री को विवाह संस्कार के अतिरिक्त और सभी संस्कारों से वंचित कर दिया। सनातन, वैदिक काल के उच्च, सुदृढ़ आदर्शों की इमारत ढह चुकी थी। फिर पुरूष ने स्त्री को अपनी भोग्य वस्तु बना लिया था , वह पशु के तुल्य पराधीन हो चुकी थी। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि और श्रीरामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास ने कहा है, ''ढोल, गंवार, शूद्र, पशु, नारी, ये सब ताड़न के अधिकारी '', तो दूसरे भक्त कवि कबीर ने तो नारी की परछाईं से बचने का उपदेश दिया, ''नारी की झाईं परत अंधा होत भुजुंग कबीरा, तिनकी का गति जो नित नारी के संग। इस काल में धीरे-धीरे बाल-विवाह, पर्दे की बेड़ियां तथा अविद्या का अंधकार नारी समाज के लिए अभिशाप बनने लगे। स्वेच्छाचारिता तथा अमानुषिकता की पराकाष्ठा हो गई थी , क्योंकि आत्मज्ञान में निमग्न पुरूषों ने उसे मोक्ष मार्ग की मुख्य बाधा माना। सभ्य पुरूषों ने स्त्री की चर्चा करना वैषियकता का लक्षण माना और विरक्तों ने उसका मुखावलोकन करना नि षिद्ध माना। विलासियों और कवियों ने उसे विलास की वस्तु समझा। गृहस्थों ने माता , भगिनी तथा कन्या के रूप में उसे देवता , धरोहर माना परन्तु किसी ने भी उसे तुल्य , स्वत्व और पराक्रम मानव नहीं माना।

मध्यकालीन काव्य में मीरा को छोड़कर अन्य भक्त एवं सन्त कवियों ने ना री की सार्थकता पुरूष वर्चस्ववादी ढांचे में ही सुरक्षित की है। हिन्दी साहित्य में नारी की अस्मिता की पहली आवाज मीरा के काव्य में सुनाई पड़ती है। मीरा के काव्य में एक ओर स्त्री की पराधीनता और यातना की अभिव्यक्ति है तो दूसरी ओर उस व्यवस्था के बंधनों का पूरी तर ह निषेध और उससे स्वतंत्रता के लिए दीवानगी की हद तक संघर्ष भी है। अन्तर्द्वन्द्व, नारी उत्पीड़न, नारी के विरूद्ध अन्याय के विरोधी तेवर, अस्तित्व बोध, समता, चेतना तथा रूढ़िता विरोधी क्रान्ति स्वर परिलक्षित हैं। हर युग में अनेक दृष्टि से नारी का संरचनात्मक योगदा न जहां सर्वथा सराहनीय रहा है, वहीं इस युग में भी सुभद्रा कुमारी चौहान , तोरन देवी, शुक्ल लली, सुमित्रा कुमारी सिन्हा आदि जिन्होंने स्त्री को अपनी आवाज दी। मध्यकाल में सैकड़ों बार पुरूषों के हाथ से जाती हुई बाजी को पुनः हस्तगतः करने में उन्होंने अदम्य उत्साह एवं साहस का परिचय दिया। अंग्रेजों की साम्राज्य -पिपासा ने जब फ्रांस देश का राज्य हड़प लिया, तो स्वदेश फ्रांस को उनके डरावने मुख से साबित बाहर निकाल लाने वाली वीर रमणी देवी जोन का नाम उल्लिखित है। मध्यकालीन नारी कुसंस्कारों में पली हुई , परम्परा के बन्धनों में सीमाबद्ध, अशिक्षित दृष्टि बिन्दु, गृह की क्षुद्र सीमा में ही केन्द्रित रहा है। इतिहास तथा साहित्य में इसके अपवाद भी हैं, पर जनसामान्य में नारी निश्चित सीमाओं, आदर्शों, रेखाओं पर इच्छा अथवा अनिच्छा

से चली है। उसके अशिक्षित मस्तिष्क कुसंस्कारों से पूर्ण हृ दय पर नियामकों ने आदर्श का भार लादने का प्रयास किया है। बौद्धिकता तथा तर्क-वितर्क की भावना रहित नारी के सरल हृदय ने इन आदर्शों को अपने जीवन पथ का ध्रुवतारा समझा। इन आदर्शों, एक पक्षीय पवित्रता तथा पतिव्रत को उसने सदा ही शिरोधार्य किया है। इन आदर्शों की उपल ब्धि के प्रयास में उसे विस्मृत हो गया कि उसके पग श्रृंखलाबद्द हैं , अतः वह पतित भी हुई। मानुषी तथा अमानुषी शक्तियों के संघात से उसका अपकर्ष हुआ। निरीह सरल विश्वास से उसने पुरूष को आत्मसमर्पण कर दिया तथा पति को ही परमेश्वर माना। फलतः मध्ययुग की नारी पुरूष के इंगित पर नृत्य करने वाली काष्ठ -पुत्तिलिका मात्र रह गयी। उसमें चेतनता तथा व्यक्तित्व का अभाव रहा। भक्तिकाल में नारी के भौतिक और अध्यात्मिक दोनों प्रकार के सौन्दर्य की अनुभूति हुई है। नारियों के शारीरिक और मानसिक सौन्दर्य का निरूपण किया गया है।

''नारी सौन्दर्य की उदात्तता, उसके तीनों रूपों- माता, पत्नी और कन्या में भक्तिकाल के कवियों ने अंकित की है। ज्ञानमार्गियों के लिए माता परमात्मा स्वरूप भी है अथवा कहना चाहिए कि उन्होंने माता में परमात्मा की विशेष स्थापना देखी है। सन्तों और भक्तों ने अपनी वैराग्यपूर्ण वृ त्ति से प्रेरित होकर उसे 'सर्पिणी' और 'भव-बन्धन' का मुख्य कारण बताया। तुलसी जैसे समन्वयात्मक दृष्टि सम्पन्न कवि ने उसे माता और जीवन की सच्ची सहधर्मिणी के रूप में भी चित्रित किया। मध्ययुग के वैभवपूर्ण भौतिक वातावरण में नारी के प्रति एक विशेष प्रकार के दृष्टिकोंण का आविर्भाव हो जाना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं थी। भारतवर्ष में नारी की निन्दा और प्रशंसा दोनों बातें पाई जाती हैं। एक ओर सन्तों ने उसे काम-स्वरूपा जानकर उसकी निन्दा की है, तो दूसरी ओर भारतवर्ष में ही यह भी कहा गया है कि जहां स्त्रियों का आदर होता है , वहां देवता विचरण करते हैं। स्त्री के सम्बन्ध में मीरा का दृष्टिकोंण अन्य भक्तिकालीन कवियों में एकदम अलग है। सामन्ती समाज व्यवस्था ने स्त्री को सिर्फ तीन नाम दिए हैं -पत्नी, रखैल एवं वैश्या और उसे सिर्फ दो रूपों में देखा है-देवी तथा दासी। मीरा ने स्त्री के इ न सब परंपरागत रूपों को अस्वीकार किया है। मीरा की कविता में सामन्ती समाज और संस्कृति की जकड़न से बेचैन स्त्री -स्वर की मुखर अभिव्यक्ति हुई है। उनकी स्वतंत्रता की आकांक्षा जितनी अध्यात्मिक है , उतनी ही सामाजिक भी। आज स्त्री -विमर्श के बुलन्द नारे के बीच मीरा का व्यक्तित्व एवं उनका काव्य किस प्रकार प्रासंगिक हो सकता है , यह विचरणीय है। ''सूरदास ने माता यशोदा के मक्खन समान स्नेह , आत्मत्याग और निःस्पृह वात्सल्य का जो चित्र प्रस्तुत किया है, वह मधुरता के साथ उदात्त है। वहीं तुलसीदास ने ''माता को परमाभिवंधा कहा है, जिसका स्थान पिता की अपेक्षा अत्युच्च है। नारी हृदय कोमलता, दया, सहानुभूति और स्नेह की सजीव प्रतिमा है। कार्यों, रूपों और स्थितियों के अनुसार नारी के अनेक नाम भारतीय साहित्य में प्रचलित है , जिससे नारी के विभिन्न स्वरूपों का बोध होता है। ''नर के धर्म वाली या न र के संबंध होने के कारण उसका 'नारी' नाम पड़ा। इस शब्द से सृष्टि के एक-एक प्राणी विशेष का रूप सामने आता है और यह भक्तिकाल में प्रायः उसी अर्थ में प्रयुक्त भी होता था, जिस अर्थ में आजकल साधारणतयाः 'मादा' शब्द का प्रयोग होता है।

मध्यकाल में कन्या जन्म के अशुभ माने जाने के संकेत मिलते हैं। सदैव लड़कियां पैदा करने वाली स्त्री को घृणा से देखा जाता था। स्त्री को कुछ सम्मान पुत्र की माता बनने पर मिलता था। परन्तु इस्लाम के भारत में आने के बाद सुरक्षा , विवाह, दहेज आदि प्रश्नों ने कन्या जन्म को सामाजिक अप्रतिष्ठा का विषय बना दिया। अतः कन्या शिशु हत्या की परम्परा प्रारम्भ हुई। स्त्रियों की सुरक्षा व अप्रतिष्ठा के प्रश्न ने कन्या शिशु हत्या के आंकड़ों में बृद्धि की। 'अमीर खुसरो' इसीलिए कहते हैं, ''मैं चाहता था कि तुम्हारा जन्म ही नहीं होता और यदि होता भी तो पुत्र के रूप में। कोई भाग्य का विधान नहीं बदल सकता , परन्तु मेरे पिता ने एक स्त्री से जन्म लिया और मुझे भी तो एक स्त्री ने ही पैदा किया था।

उपसंहार:

स्पष्ट है कि भारत में शताब्दियों की पराधीनता के कारण महिलाएं अभी तक समाज में पूरी तरह वह स्था न प्राप्त नहीं कर सकी हैं जो उन्हें मिलना चाहिए और जहाँ दहेज की वजह से कितनी ही बहू-बेटियों को जान से हाथ धोने पड़ते हैं तथा बलात्कार आदि की घटनाएं भी होती रहती हैं , वही हमारी सभ्यता और सांस्कृतिक परम्पराओं और शिक्षा के प्रसार तथा नित्यप्रति बद रही जागरूक ता के कारण भारत की नारी आज भी दुनिया की महिलाओं से आगे है और पुरुषों के साथ हर क्षेत्र में कंधे से कंधा मिलाकर देश और समाज की प्रगति में अपना हिस्सा डाल रही है ।

सदियों से समय की धार पर चलती हुई नारी अनेक विडम्बनाओं और विसंगतियों के बीच जीती रही है । पूज्जा, भोग्या, सहचरी, सहधर्मिणी, माँ, बहन एवं अर्धांगिनी इन सभी रूपों में उसका शोषित और दमित स्वरूप । वैदिक काल में अपनी विद्वत्ता के लिए सम्मान पाने वाली नारी मुगलकाल में रनिवासों की शोभा बनकर रह गई ।

लेकिन उसके संघर्षों से , उसकी योग्यता से बन्धनों की कड़ियां चरमरा गई । उसकी क्षमताओं को पुरुष प्रधान समाज रोक नहीं पाया । उसने स्वतन्त्रता संग्राम सरीखे आन्दोलनों में कमर कसकर भाग लिया और स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान में बराबरी का दर्जा पाया । राम राज्य से लेकर अब तक एक लम्बा संघर्षमय सफर किया है नारी ने । कई समाज सुधारकों , दोलनों और संगठनों द्वारा उठाई आवाजों के प्रयासों से यहां तक पहुंची है, नारी ।

जीवन के हर क्षेत्र में पुरुष के साथ कंधे से कंधा मिलाकर चलने वाली नारी की सामाजिक स्थिति में फिर भी परिवर्तन 'ना' के बराबर हुआ है । घर बाहर की दोहरी जिम्मेदा री निभाने वाली महिलाओं से यह पुरुष प्रधान समाज चाहता है कि वह अपने को पुरुषो के सामने दूसरे दर्जे पर समझें ।

आज की संघर्षशील नारी इन परस्पर विरोधी अपेक्षाओ को आसानी से नहीं स्वीकारती । आज की नारी के सामने जब सीता या गांधारी के आदर्शो का उदाहरण दिया जाता है तब वह इन चरित्रों के हर पहलू को ज्यों का त्यों स्वीकारने में असमर्थ रहती है । देश, काल, परिवेश और आवश्यकताओ का व्यक्ति के जीवन में बहुत महत्व है, समाज इनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता ।

सीता के समय के और इस समय के सामाजिक परिवेश में धरती -आसमान का अंतर है । समाज सेविका श्रीमती ज्योत्सना बत्रा का कहना है कि आज के परिवेश मे सीता बनना बडा कठिन है । सीता स्वय में एक फिलोसिफी थीं । उनका जन्म मानव-जाति को मानव-मूल्यों को समझाने के लिए हुआ था ।

दूसरो के लिए आदर्श बनने के लिए व्यक्ति को स्वयं बहुत त्याग करने पडते है जैसे सीता ने किए । राम और सीता ने जीवन को दूसरो के लिए ही जिया । राम जानते थे कि धोबी द्वारा किया गया दोषारोपण गलत है, मिथ्या है । परंतु उन्होंने उसका प्रतिरोध न करके प्रजा की संतुष्टि के लिए सीता का त्याग कर दिया ।

राम की मर्यादा पर कोई आच न आए , प्रजा उन पर उंगली न उठाए यह सोचकर सीता ने पति द्वारा दिए गए बनवास को स्वीकार किया और वाल्मीकि के आश्रम में रहने लगी । अब न राम सरीखे शासक हैं न वाल्मीकि समान गुरू । हम सभी जानते हैं कि सीता के जीवन का संपूर्ण आनंद पति में ही केंद्रित था ।

पति की सहचरी बनी वह चि त्रकूट की कुटिया में भी राजभवन सा सुख पाती थी । 'मेरी कुटिया में राजभवन मन माया' सीता का यह कथन अपने पति श्री राम के प्रति उनकी अगाध आस्था को दर्शाता है । सीता अपना और राम का जन्म -जन्म का नाता मानती थीं । आज भी भारतीय नारी पति के साथ अपना जन्म-जन्म का नाता मानती है ।

युगदृष्टा, युगसृष्टा नारियों के चरित्र हमारी सांस्कृतिक धरोहर हैं । हम उनके चरित्र के मूल तत्वों का समावेश अपनी जिंदगी मे कर सकते हैं । श्रीमती डॉक्टर आशा शाहिद के अनुसार लगभग चौबीस वर्षों से मैं अमरीका में रह रही हूँ । हमने अपनी एक मात्र बेटी में भारतीय मूल के संस्कार डाले हैं, उसे रामायण व सीता के चरित्रों से अवगत कराया है ।

भारत का नवनिर्माण इसकी आज़ादी के साथ हुआ। राष्ट्रट निर्माण के विभिन्न स्तरों पर भारतीय नारी का असीम योगदान रहा है। महिलाओं ने न सिर्फ कड़े संघर्ष से मिली स्वतंत्रता को बना ए रखा बल्कि हर क्षेत्र में अपने देश का नाम मेहनत, लगन और आत्मविश्वास के साथ बुलंदियों तक पहुंचाया।

राजनैतिक और सामाजिक सुधारों के क्षेत्र में महिलाओं ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। विजय लक्ष्मी पंडित ने 1946, 1947, 1950 और 1963 में संयुक्तराष्ट्री संघ में भारत का प्रतिनिधित्व किया। 1953-

54 में वह संयुक्तराष्ट्र महासभा की सदस्य भी रहीं। 1962-64 में महाराष्ट्रcकी राज्यपाल और 1964-66 तक लोकसभा की सदस्य रहीं। कुल्सुम जे. सायानी ने 1957 में यूनेस्को के तत्वावधान में हुए प्रौढ़ शिक्षा सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व किया। उन्हें 1959 में समाज सेवा के लिए पद्मत्श्री तथा 1969 में नेहरू साक्षरता पुरस्कार से सम्मुनित किया गया। जैनब बेगम 1972 में विधानसभा की सदस्य निर्वाचित हुईं तथा कई वर्षों तक ज़िला कांग्रेस कमेटी श्रीनगर की अध्यक्षा रहीं। उन्होंने पिछड़ी हुई जाति यों के लिए 27 वर्ष तक निरंतर कार्य किया। वह इनके बीच रहीं, इनके दुख-दर्द को समझा और बराबर जन कल्याण में जुटी रहीं। उन्होंने युद्ध विधवाओं को बसाने के लिए बहुत -सी योजनाएं बनाईं जिससे वे अपने परिवार का पालन - पोषण कर सकें। अहिंसा आंदोलनों में सहभागिता करने वा ली अनुसूया बाई स्वतंत्रता के बाद केन्द्रीय विधान सभा की सदस्या चुनी गईं।

इंदिरा गांधी ने देश की प्रथम महिला प्रधानमंत्री के तौर पर शासन व्यवस्था बखूबी संचालित की। उनके नेतृत्व में भारत राजनीतिक मोर्चे पर ही आगे नहीं बढ़ा बल्कि आर्थिक , वैज्ञानिक और तकनीकी क्षे त्रों में उसने उल्लेखनीय प्रगति की है। बैंकों में राष्ट्री यकरण से समाजवाद तथा पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से देश के आर्थिक विकास को नई दिशा दी। विज्ञान के क्षेत्र में भी उनकी महत्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। अपनी सूझ-बूझ और दूरदर्शिता से उन्होंने भारत की विदे शी नीति को नए आयाम दिए। बंगला देश के स्वतंत्रता आंदोलन और पाकिस्तान से युद्ध के दौरान उन्होंने अद्वितीय भूमिका निभाई। राजधानी में एशियाई खेलों का सफल आयोजन तथा मार्च, 1983 में नई दिल्ली में गुट निरपेक्ष राष्ट्रों का शिखर सम्मेलन आयोजित कर उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय जगत में भारत का मान बढ़ाया। गुट निरपेक्ष आंदोलन की अध्यक्षा के रूप में उन्होंने युद्ध की विभीषिका को कम कर विश्वट शांति की स्थापना के लिए अथक प्रयास किए। उनके देश की बागडोर संभालने के वक़त देश गंभीर आर्थिक संकट के दौर से गुजर रहा था। 1962 के चीनी हमले और 1965 में पाकिस्तान से युद्ध के कारण आर्थिक स्थिति गड़बड़ाई हुई थी। 1965 में सूखे ने हालात और भी भयावह कर दिए थे। निर्गुट राष्ट्रक सम्मेलन में भारत का बोलबाला कम हो रहा था। ऐसी अनेक समस्याओं को धैर्य से हल करके इंदिरा गांधी ने भारत की प्रतिष्ठा और लोकप्रियता में शानदार वृद्धि की।

शांतिदूत मदर टेरेसा ने विदेशी होते हुए भी भारत को अपना कर्मक्षेत्र बनाया। कलकत्ता में 'द सोसाइटी ऑफ द मिशनरीज़ ऑफ चैरिटी' नामक संस्था के माध्यम से उन्होंने ग़रीबों, दीन-दुखियों, लाचारों की सेवा का बीड़ा उठाया। उन्होंने करु णा तथा प्रेम को नया अर्थ प्रदान किया। अनेक अंतर्राष्ट्री य व राष्ट्री य पुरस्कारों से सम्मानित मदर टेरेसा अपनी पूरी ज़ न्दिगी दया का फ़रिश्ता बनी रहीं। उन्होंने दया, प्रेम, सेवा, मानवता के संदर्भों को भारत के परिप्रेक्ष्य में पूरी दुनिया में वितरित किया।

दुर्गाबाई देशमुख ने महिलाओं के कल्याण के लिए केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड की स्थापना की। 1953 से 1965 तक वह इसकी चेयरमैन रहीं। उन्होंने अखिल भारतीय महिला परिषद् की कार्यकता के नाते व्यापक सामाजिक कार्य किए। वह महिला शिक्षा की राष्ट्रीअय कमेटी, आंध्र महिला संघ, विश्वे विद्यालय महिला संघ,

नारी रक्षा समिति तथा नारी निकेतन से सक्रिय रूप से जुड़ी रहीं। महिला व समाज कल्याण पर उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। 1975 में उन्हें पद्म भूषण की उपाधि प्रदान की गई।

पद्म जा नायडू ने 1956-67 तक पश्चिम बंगाल की प्रथम महिला राज्य पाल के तौर पर उल्लेखनीय कार्य किया। 1968-74 तक वह नेहरू मैमोरियल एंड म्यूज़ियम की अध्यक्षा भी रहीं। पदम भूषण डॉ. मुत्थुलक्ष्मी रेड्डी ने मद्रास में कैंसर अस्पताल की स्थापना की। वह मद्रास स्टेट सोशल वेलफेयर एडवाइज़री बोर्ड की 1957 तक अध्यक्षा रहीं। दिल्ली की सुविख्यात समाज सुधारक रुस्तमजी फरीदोनजी ने महिलाओं के लिए नागरिक एवं राजनीतिक दोनों अधिकारों के लिए संघर्ष किया। वह अंत तक इंडिया ऐजूकेशन फंड एसोसिएशन की अध्यक्षा रहीं। उन्होंने दिल्ली के 'लेडी इरविन कॉलेज फॉर वुमन' की स्थापना भी की। दक्षिण भारत की समा ज सुधारक लक्ष्मी मेनन 1952 में राज्य सभा हेतु निर्वाचित हुईं। 1952-57 तक संसदीय सचिव, 1952-57 तक डिप्टी मिनिस्टर, 1957-62 तक राज्य मंत्री तथा 1962-67 तक विदेश मंत्रालय में रहीं। उन्हें 1957 में पद्मि भूषण से सम्मानित किया गया। 1967 में उन्होंने सक्रिय राजनी ति से अवकाश ग्रहण कर अपना सारा समय महिलाओं के सांस्कृतिक व सामाजिक कार्यों को समर्पित कर दिया। वह ऑल इंडिया वुमेंस कान्फ्रेंस की फाउंडर मेंबर थीं। पद्मक श्री से सम्मानित दिल्ली की सविता बेन 1946-53 तक दिल्ली प्रदेश सेविका दल की जनरल ऑफिसर कमांडिंग रहीं। उन्हों ने हरिजन व मज़दूर बच्चों के लिए तीन स्कूल खोले। दिल्ली में हरिजन प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र , महिलाओं के लिए ट्रेनिंग तथा व्यावसायिक प्रशिक्षण केन्द्र तथा दो केन्द्र शरणार्थी महिलाओं के लिए खोले। 1956-57 में वह दिल्ली पालिका केन्द्र की प्रथम महिला उपाध्यक्ष रहीं। 1972 में वह राज्य सभा हेतु निर्वाचित हुईं उपरोक्त के अलावा भी असंख्य अन्य महिलाओं ने देश की राजनीति में सक्रिय भाग लेकर इसके विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

1972-73 में महाराष्ट्र व उत्तराखंड में महिलाओं ने शराब विरोधी अभियान छेड़े। उत्तरा खंड में महिलाओं ने वृक्षों से चिपककर बिगड़ते हुए पर्यावरण के प्रति अपनी चिंता जताई , इन्हीं वर्षों में महाराष्ट्र में महिलाओं का बढ़ती महंगाई के खिलाफ़ अभियान शुरू हुआ। 1975 में वामपंथी महिलाओं ने पुणे में पुरोग्रामी स्त्री संगठन तथा मुंबई में स्त्री मुक्ति संगठन स्थापित करके दलित महिलाओं व देशवासियों के उत्थान की दिशा में काम किया। 1975 में प्रगतिवादी महिला संगठन ने हैदराबाद में पहला दहेज़ विरोधी मोर्चा निकाला। 80 के दशक में महिला दक्षता समिति , कर्मिका, नारी रक्षा समिति , सहेली ने मिलकर दहेज़ के ख़िलाफ़ आवाका बुलंद की और इस सामाजिक बुराई के ख़िलाफ लोगों में चेतना पैदा की। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान गांधी जी ने जिस सत्याग्रह को अपनाया था उसे उन्होंने इस देश की साधारण महिलाओं से ही सीखा था। बातचीत द्वारा समस्या का हल निकालना , वार्तालाप करना, धीरे-धीरे विरोधी को अपने अनुकूल ढालना -यह सब तरीके महिलाओं ने अपने अनुभवों से ही विकसित किए हैं।

वर्तमान में भी महिलाएं दिल्ली और मुंबई जैसे महानगरों में महापौर , मुख्यमंत्री, केन्द्रीय मंत्री, राज्य मंत्री और सांसदों के पद पर आसीन हो देश की प्रगति के लिए कार्यशील हैं। देश के विभिन्न राज्यों के ग्रामीण क्षेत्रों में पंचायतों में भी महिलाएं विभिन्न पदों पर आसीन हैं। अनेक सामाजिक संगठनों के बल पर राष्ट्र की छवि निखारने का बीड़ा महिलाओं ने उठाया है, उनका यह कार्य श्लाघा योग्य है।

किसी भी राष्ट्रा के निर्माण में साहित्य की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण रही है। विशिष्टग साहित्य समाज के नागरिकों में उत्तम गुणों का संचार करता है तथा राष्ट्रि को अंतरर्राष्ट्रीय स्तर पर मान दिलाता है। भारतीय साहित्य क्षेत्र में महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान से लेकर नई पीढ़ी की महिला रचनाकारों में भी राष्ट्र के प्रति ग़ौर, आस्था के भाव व नागरिकों के लिए चेतना के स्वर प्रस्फुटित होते आए हैं। कहानी के क्षेत्र में मन्नू भंडारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा, मृदुला गर्ग, मैत्रेयी पुष्पा, कवियित्रियों में कीर्ति चौधरी, शकुंत माथुर, इंदु जैन, स्नेहमयी चौधरी, अनामिका कात्यायनी के अतिरिक्त समग्र साहित्य के क्षेत्र में अमृता प्रीतम, अजीत कौर, अनिता देसाई, कमला दास, शशि देशपांडे, मंजीत कौर टिवाणा, पदमा सचदेव, प्रतिभा दे, लिली मिश्रा दे, राजम कृष्णन, प्रभजोत कौर, कुर्रतुल-एन-हैदर, तारा मीरचंदानी, मालती चंदर, महाश्वेता, कला प्रकाश, आशापूर्णा देवी, कुंदनिका कपाड़िया, सुनेत्र गुप्ता, इंदिरा गोस्वामी, नवनीता देव सेन सहित अनेक महिला रचनाकारों ने विभिन्न भाषाओं में अपनी रचनाओं में भारतीय जन -जीवन, मानवीय संवेदनाओं का गहन चित्रण कर के देश-विदेश में भारत का मस्तक ऊंचा किया। अरुंधती राय को उनके उपन्यास 'द गॉड ऑफ स्माल थिंग्स' के लिए बहुप्रतिष्ठित बुकर पुरस्कार मिला।

आज मीडिया, पत्रकारिता एवं जनसंचार के क्षेत्र में भी महिलाओं का वर्चस्व क़ायम है। सेना , वायुयान उड़ाना, पर्वतारोहण आदि विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं ने अपनी भागीदारी करके लैंगिक असमानता को दूर कर दिखाया है। शिक्षा , विज्ञान, खेल-कूद, व्यवसाय, सूचना-प्रौद्योगिकी, चिकित्सा आदि सभी क्षेत्रों में महिलाएं पुरुषों से अधिक योग्य सिद्ध हो रही हैं। 9 मई, 1984 को कुमारी बछेंद्रीपाल एवरेस्ट चोटी पर विजय पताका फहराने वाली प्रथम भारतीय महिला बनीं। 5 अक्तूबर, 1989 को केरल उच्च न्यायालय की भूतपूर्व न्यायाधीश एम. फातिमा बीवी ने सर्वोच्च न्यायालय की प्रथम महिला न्यायाधीश के पद को सुशोभित किया। गीत-संगीत के क्षेत्र में महिलाओं ने आकाश की बुलंदियों को स्पर्श करके विदेशियों को भी मोहित कि या है। एम. एस. सुब्बलक्ष्मी ने अपनी मीठी वाणी से कर्नाटकीय संगीत को पश्चिम के लोगों में लोकप्रिय कर दिया। स्वर कोकिला लता मंगेशकर तथा आशा भोंसले की मीठी तान सुनकर भारतीय ही नहीं सुदूर देशों में बसे विदेशी भी झूम उठते हैं। प्रथम महिला आई .पी.एस. किरण बेदी ने भारत की सबसे बड़ी तिहाड़ जेल में कैदियों को सुधार कर अपने प्रयास शुरू किए। उन्हें वांछित सफलता के साथ -साथ मैगासेसे पुरस्कार और जोसफ बियुस पुरस्कार मिले , साथ ही विश्वव्यापी प्रसिद्धि भी। कमला देवी चट्टोपाध्याय भारतीय संस्कृति , कला रंगमंच और साहित्य की प्र मुख हस्ताक्षर रहीं हैं वह समाज सेवा और राजनीति में भी अग्रणी रहीं। उन्होंने भी मैगासेसे पुरस्कार हासिल कर भारत का मान बढ़ाया।

मध्यकालीन भारत में स्त्री शिक्षा के बारे में जानकारी अपर्याप्त है। यद्यपि इब्नबतूता लिखते हैं कि ''जब वह हानौर पहुँचा तो वहां उसने 23 ऐसे विद्यालय देखे जिनमें बालिकायें शिक्षा ग्रहण करतीं थीं। नगरों व बड़े घरानों की स्त्रियों के पढ़ने-लिखने के संकेत मिलते हैं किन्तु सामान्य परिवारों एवं ग्रामीण क्षेत्र में शिक्षा का स्तर नीचा था। भक्तिकालीन साहित्य में मीराबाई, गबरीबाई, दयाबाई, सहजोबाई का योगदान एवं पातुरों द्वारा लिखा गया साहित्य द्वारा स्त्रियों में शिक्षा के प्रसार के बारे में जानकारी मिलती है। भक्तिकाल का साहित्य सृजन लोकभाषा एवं मातृभाषा में होने के कारण स्त्रियों को पढ़ने-लिखने की प्रेरणा मिली। इस काल में नारी की स्थिति और भी बदतर हो गयी। कुल के रक्त की शुद्धता , नारी के सतीत्त्व की रक्षा और हिन्दू धर्म की रक्षा के नाम पर नारी को ऐसे सामाजिक-धार्मिक बंधनों में जकड़ दिया गया कि वह पुरूष की छायामात्र होकर रह गई और उसका स्वतंत्र अस्तित्व लुप्त हो गया। इस काल में स्त्री -शिक्षा समाप्त हो गई। पर्दा-प्रथा और सती प्रथा यहां तक कि मादा -शिशु की हत्या भी होने लगी। उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में विदेशी आक्रमणों का प्रभाव कम था , इसलिए वहां बाल -विवाह, पर्दा-प्रथा और सती -प्रथा जैसी कुप्रथायें कम पनप सकीं। यद्यपि मध्यकालीन इतिहास में रजिया बे गम, चाँद बीबी, ताराबाई, अहिल्याबाई आदि वीरांगनाओं ने शासन संचालन में ख्याति प्राप्त की किन्तु इन चंद नारियों के उदाहरण से यह नहीं कहा जा सकता कि सामान्य स्त्री की स्थि ति किसी भी तरह संतोषजनक थी। 11वीं शताब्दी के प्रारम्भ में ही भारतीय समाज पर उसके आपसी मतभे द एवं फूट के कारण मुस्लिमों का आधिपात्य हो गया था। उनके प्रतिदिन के बढ़ते वर्चस्व के कारण संस्कृति रक्षा एवं मनु स्मृति के नाम पर नारी के स्वतंत्र अस्तित्व का न केवल पूर्णतयाः लोप हो गया वरन् उन्हें समाज की चाहरदीवारों में कैद कर दिया गया। लगातार आक्रमणों में भागीदारी, परिवार एवं समाज को सुरक्षा प्रदान करते रहने के कारण पुरूषों का गौरव बढ़ता चला गया। धीरे-धीरे स्थिति यह आयी कि सुविधा एवं सुरक्षा जुटाते रहने के कारण पुरूषों के वर्चस्व को समाज में मान्यता दे दी गई, नारियां मात्र भोग-विलास का पर्याय बन गयीं। उन का कार्य केवल सज-संवर कर पुरूषों की इच्छा पूर्ति करना अथवा उनके बच्चों की माँ बनकर उनकी देख -रेख करना रह गया। वे बाजार की एक बेजान वस्तु की भांति हो गईं जिनकी हर सांस पर दूसरों का अधिकार था।

संदर्भ ग्रन्थ:

1- अग्रवाल, चन्द्रमोहन, भारतीय नारी: विविध आयाम, पृ- सं- 35, श्री अल्मोड़ा बुक डिपो, अल्मोड़ा।
2- बृहदारण्यक, उपनिषद, 1/4/17
3- अग्रवाल, प्रेमनारायण, सम्पादन, जगदीश्वर चतुर्वेदी, पृ. सं. 23-24, अनामिका पब्लिशर्स एंड डिपो , नई दिल्ली।

4- स्त्री: भारतीय एवं पाश्चात्य अवधारण , डॉ. मधु देवी , अंतर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका , शोध, समीक्षा और मूल्यांकन, पृ. सं. 74।
5- शर्मा, गजानन, प्राचीन साहित्य में नारी, पृ. सं. 21, रचना प्रकाशन, 45-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद।
6- सूरसागर, पहला खण्ड, सं. नन्द दुलारे बाजपेयी, पृ. सं. 255 से 594 तक के विविध प्रसंग
7- अयोध्या काण्ड, दोहा, 56, चौ. 1
8- शर्मा, गजानन, प्राचीन भारतीय साहित्य में नारी , पृ. सं. 42-43, रचना प्रकाशन, 45-ए, खुल्दाबाद, इलाहाबाद।
9- वही, पृ. सं. 42-43
10- कस्तवार, रेखा, स्त्री चिन्तन की चुनौतियां, राजकमल प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2006, पृ. सं. 64
11- वही, पृ. सं. 64
12- वही, पृ. सं. 64
13- वही, पृ. सं. 64
14- कौशिक, आशा, नारी सशक्तीकरण: प्रतिशत विमर्श एवं यथार्थ, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, 2004, पृ. 200